लेखकक अन्य कृति—

*कुमार — (उपन्यास)
*संन्यासी — (काव्य)
*विडम्बना — (कथा-संग्रह)
*गीता — (मैथिली पद्यानुवाद)
*बाभनक बेटी — (उपन्यास—प्रेसमे)

रूबाइयात-ए-ओमर खैयाम

(मैथिली पद्यानुवाद)



—श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

भूमिका

पाँच वर्ष पूर्व श्रीयुत् रमानाथ बाबू, (प्राध्यापक, मिथिला कालेज) गप्पक प्रसङ्गें कहलन्हि जे स्व॰ अमरनाथ बाबूक बड़ इच्छा छलन्हि, मैथिलीमे 'ओमर खैयाम' क पद्यानुवाद होइत। स्व॰ अमरनाथ बाबू अंगरेजी साहित्यक त अगाध विद्वान् छलाहे, हुनका संस्कृत, हिन्दी, बङ्लाक सङ्ग उर्दू ओ फारसीओ साहित्यक असाधारण ज्ञान छलन्हि, ई विद्वद्वर्गकें ज्ञात छन्हि। हुनक अपन मातृभाषानुरागमूलक एहि इच्छाक पूर्ति जीवनकालमे नहि भए सकलन्हि, ई मैथिली साहित्यक लेल खेद ओ ग्लानिक विषय, कारण संसारक समस्त प्रतिष्ठित साहित्यमे 'ओमर खैयाम'क एकाधिक अनुवादक अनेको संस्करण प्रकाशित भए चुकल अछि।

अपन कवित्व शक्ति, फारसीक एको अक्षरक ज्ञानक अभाव, एवं अङरेजिओ साहित्यक कविताक मर्म बुझबामे अपन बुद्धिक सीमाकें ध्यानमे राखि, हम ने श्रीयुत् रमानाथे बाबूकें किछु कहलिअन्हि, आ'ने अपने दू वर्ष धरि एहि दिशि चेष्टे कएलहुँ। उत्सुकतावश बङला, हिन्दी एवं अङ्ग्रेजीक 'ओमर खैयाम' भड़ाओल अवश्य, किछु पढ़बो कएल–परन्तु एतबे धरि। सन् १९६३ क मार्चमे एकाएक एहि दिशि प्रवृत्ति भेल, अनुवाद आरम्भ कएल। करीब डेढ़ मासमे अनुवाद सम्पन्न भेल। पाछाँ सुनलहुँ, मैथिलीमे एक-दू गोटे एकर सम्पूर्ण वा किछु अंशक अनुवाद पहिनहुँ कएने छथि। एमहर आबि पुस्तकाकार एकटा प्रकाशितो भेल अछि।

पहिने इच्छा छल जे मूल फारसीक गद्यानुवाद हिन्दी, उर्दू वा

अङरेजिओमे भेटैत त वास्तविक अनुवाद करबाक चेष्टा करितहुँ । परन्तु उपलब्ध ग्रंथ सभमे—एतेक तक जे खुदाबक्स लाइब्रेरियोमे ई सुविधा नहि भेटल । अन्ततः 'ओमर खेयाम' क नहि, 'फिट्जेरॉल्ड'-कृत अनुवाद (जे अनुवादक राजा बूझल जाइछ) क अनुवाद कएल अछि ।

'रुबाइ' पद्यक विशिष्टता होइछ जे एहि मुक्तक चतुष्पदीमे प्रथम दोसर ओ चारिम पंक्तिमे वर्णान्ति मेल—तुकान्त रहैछ । 'फिट्जेरॉल्ड' महोदय एकर विलक्षण उपयोग कएलन्हि । हिन्दी ओ बङलाक जे गोड़-चारिएक अनुवाद हमरा उपलब्ध छल ताहिमे एकर अभाव देखना गेल । परन्तु अपन कृति सम्पन्न भेलाक डेढ़ वर्षक बाद हमरा राष्ट्रकवि 'गुप्त' जीक हिन्दी अनुवाद भेटल जाहिमे ओ 'रुबाइ'क मर्य्यादाक रक्षा कएने छथि ।

हम अपन अनुवादमे ई वैशिष्ट्य राखल अछि, संगहि यत्र तत्र पद्य समहिक मात्रा ओ आकारमे किछु विभिन्नता आनि क्रम-शैथिल्य—'मोनो-टोनी'-हँटएबाक सेहो प्रयास कएल अछि ।

पद्यानुवादमे यथासम्भव भाव एवं अर्थकें अक्षुण्ण रखबाक प्रयत्न कएओ उत्तर कतहु कतहु देशकालानुसारें सौन्दर्य्य अनबाक हेतु किछु परिवर्त्तन सेहो कएना गेल; एकर औचित्यक विवेचन मर्मज्ञ पाठक करताह । रुबाइयातक पहिलुक अनुवादक कविकुल—विशेषकए बङलाक श्री नरेन्द्र देव ओ हिन्दीक श्री बच्चनजी, जनिक पुस्तकसँ हमरा बेश प्रेरणा ओ सहायता भेटल अछि—कें सादर धन्यवाद दैत छिअन्हि । हिनका लोकनिक चिरऋणी रहबन्हि ।

पुस्तकमे किछु रेखाचित्र देल गेल अछि जकर श्रेय छन्हि राँचीक तरुण कलाकार श्री अल्लाउद्दीनकें । पुस्तककें छपएबामे अत्यधिक

सहायक भेल छथि हमर मित्र श्री अशर्फी मिश्रजी । एहि दूनू व्यक्तिक प्रति हम अत्यन्त आभारी छी ।

फारसी भाषा ओ संस्कृतिसँ जहिना मैथिली भाषा ओ संस्कृति भिन्न, तहिना 'ओमर खैयाम' क विचारधारासँ हमरालोकनिक—मैथिलक—विचारधारा भिन्न । तथापि रुबाइयातक कवित्व, सरसता, साहित्य–सौष्ठव, एकर काव्य-माधुर्य, जे विचार-सरणि, भाषाक विभिन्नता एवं संस्कृतिक भेदभावक सीमाकें अतिक्रम कए समस्त विश्वक सुधी समाजकें चमत्कृत कएलक अछि, मैथिलो समाजकें आकृष्ट करओ, इएह हमर अभिलाषा ।

सभ तरहें अक्षम रहैत, एहि महान् कृतिक मैथिली रूपान्तर करबामे यदि हम किछुओ सफल भेलहुँ अछि त ओहि महान् मैथिल आत्मा स्व॰ अमरनाथ बाबूक आशीर्वादसँ—हम त सएह बुझैत छी ।

राँची
मधु–पूर्णिमा
१३७३ साल
(५–४–१९६६)

—अनुवादक

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार—किछु परिचय।

कवि भवभूति बहुत पहिनहि लिखने छलाह—उत्पस्यते च मम कोपि समानधर्म्मा, कालोह्ययं निरवधिविपुला च पृथ्वी।

'ओमर खैयाम' क प्रसिद्धि एवं हुनक 'रुबाइयात'क विश्वमे प्रचार—उपर्युक्त भवभूतिक उक्तिकें यथार्थ चरितार्थ करैछ।

'ओमर खैयाम' पर्शिया (फारस) देशक खोरासान प्रान्तक नैशापुर ग्राममे जन्म लेलन्हि, आठ-साबा आठ सए वर्ष पूर्व—ई० एकादश शताब्दीक प्रथमार्द्धमे। हिनक जन्म तिथि निश्चितरूपें एखनो तक ज्ञात नहि; मृत्युक विषयमे समरकन्द निबासो फारसीक प्रसिद्ध कवि निजामीक लेखसँ पता लगैछ जे ओमर खैयामक देहावसान हिजरी सन् ५१-(अर्थात् ११२३-२४ ई०) मे भेलन्हि। यद्यपि अपनो देशमे, मृत्युक बादो, कए गोट साहित्यक मनीषी हुनक नाम, कविता एवं अन्यान्य विषयक प्रसंगमे उल्लेख कएने छलथीन्ह, परन्तु संसारक साहित्यिक आकाशमे जाज्वल्य नक्षत्रक रूपमे हिनका प्रकाशित एवं प्रतिष्ठत करबाक श्रेय छन्हि—इङ्लैण्डक कवि 'फिट्जेरॉल्ड' महोदयकें, जे केवल हिनक पचहत्तरि रुबाइयातक अङ्रेजी पद्यानुवाद कए सर्वप्रथम १८५९ ई० मे प्रकाशित कराओल, एवं आधुनिक काव्य जगतक समक्ष आनल।

'ओमर खैयाम'क असल नाम छलन्हि 'गयासुद्दीन अबुल फतह ओमर इब्न इब्राहिम अल्खैयामी'। इब्राहिम हिनक पिताक नाम, खैयामी

वंश-उपाधि। दक्षिण भारतीय जेकाँ वंश, पिता, स्थान सभक परिचय नाम कहनहि ज्ञात भए जाएत। 'खैया मी' सँ साधारणतया लोककें बूझि पड़ैछ—जनिक वंशज खीमा—तम्बू—आदि बनबैत छलथीन्ह। ई अपने साधारण खीमा निश्चय नहि बनबैत छलाह—कतेको विद्वानक कथ्य छन्हि जे ओमर, सम्भव थीक, अपन उपाधि कि उपनाम एहिले रखलन्हि जे चारि खाम्हवाला, चारिपदक ई शब्दक सुन्दर कविता रूपक खीमाक रचना करैत छलाह।

ओमरक माता पिता कि पूर्व पुरुषक विषयमे किछु उपलब्ध नहि होइछ। पाठावस्थाक सम्बन्धमे किम्बदन्तीक आधार पर बुझना गेल अछि जे ई खोरासानक प्रसिद्ध इमाम मओबाफिक्कुद्दीनसँ शिक्षा लाभ कएलन्हि। गुरुसँ ज्ञानोपार्जन कएने होएताह सन्देह नहि, परन्तु हिनक अपने असाधारण बहुमुखी प्रतिभा, अद्भुत स्मरणशक्ति ओ अनेक शास्त्रमे पाण्डित्य, पर्शियाक सम-सामयिक वा बहुतो वर्ष पश्चातोक विद्वद्वर्गकें आकृष्ट कएने छल। ई केवल एक निर्भय, स्वतन्त्र विचारक, स्पष्टवादी उच्चकोटिक कविए टा नहि छलाह, ई दार्शनिक छलाह, आ' छलाह विख्यात वैज्ञानिक, गणित—ज्योतिर्विद्। अपन समयमे तत्कालीन रुढ़धर्म्म, विश्वासक विरुद्धो विचार रखबाक कि लिखबाक कारणे कविरूपें हिनक तेहन प्रतिष्ठा नहि भेल छलन्हि जतेक कि ज्योतिषीरूपें। जीवनक अन्तिम अंशमे पर्शियाक पंजिका-शोधनकार्य्यमे ई सहायक भेल छलाह-एवं जिजि-मालि कशाही' नामे ज्योतिष सिद्धान्तोक प्रणयन कएने छलाह। से छोड़ि, गणित एवं जीवशास्त्र पर कए गोट ग्रन्थक स्वतन्त्र वा संयुक्त रचना हिनक मानल जाइछ।

हिनक अधिकांश रुबाइमे प्रचलित धर्म्म-पद्धति पर अविश्वास एवं अनिष्ठा परिलक्षित होइछ, धर्म्मगुरु मुल्ला आदिक पाखंड वा आडम्बर पर कटाक्ष बूझि पड़ैछ। तें तत्कालीन समाजमे ई लोकप्रिय नहि भए

सकलाह। किन्तु हिनक प्रतिभा एवं ज्ञानक आदर करए बाल गुणग्राही व्यक्तिक नितान्त अभाव छल, से नहि। कतेको हिनका गुरुतुल्य बूझि गौरवक अनुभव करथि। समरकन्दक प्रसिद्ध साहित्यिक—निजामी आरुजी—अपन ग्रन्थ 'चाहारमाकला' मे हिनका प्रसंगमे लिखने छथि "ज्ञानि-श्रेष्ठ ओमर खैयामक मृत्यु ५१ हिजरी संबतमे भेलन्हि। दर्शन ओ विज्ञानमे ई अद्वितीय छलाह। प्रातभ्रंमणक समय अधिक काल हुनकासँ फुलवाड़ीमे भेँट होइत छल, अनेक विषय पर चर्चा-आलोचना चलए। एक दिन ओ कहने छलाह 'हमर कब्र एक एहन स्थान पर बनैत जतए कुसुमित तरु-राजि हमर समाधि पर पुष्पाञ्जलि अर्पण करैत।' ओहि दिन हुनक एहि बातकेँ कविक कल्पना बूझि हम हँसिकए उड़ा देने छलहुँ, परन्तु महाकविक मृत्युक किछुए वर्षक बाद जखन हम नैशापुर गेलहुँ त इच्छा भेल गुरुजीक समाधिपर श्रद्धाञ्जलि अर्पण करी। ओहो उद्यानमे देखल, हुनक समाधि पर जेना शाखा प्रसारित कए तरु-राजि पुष्पाञ्जलि दैत हो। खसल, छिड़िआएल पुष्पराशिसँ कविक कब्र-पाषाणवेदी भरल छल।......हुनक अपन भविष्यवाणी, हुनक आन्तरिक अभिलाषाकेँ एहि रूपेँ प्रतिफलित देखि हम हर्षातिरेकसँ विभोर भए गेल छलहुँ।"

'ओमर खैयाम'क कविता—रुबाइ—चतुष्पदी मुक्तक अछि जकर प्रथम, दोसर, चारिम पंक्तिमे तुकान्त रहैछ। फारसीमे एकर बेश चलती, अङरेजिओमे कतेको कवि एहि तरहक छन्दो-रचनामे निपुण छलाह। हिन्दीमे महाकवि जयशंकर प्रसाद पर्य्यन्त कामायनी महाकाव्यमे एक समस्त सर्ग 'स्वप्न' एही छन्दमे लिखने छथि; मैथिलीमे अवश्ये एहि छन्दक बड़ थोड़ व्यवहार भेल अछि।

'खैयाम'क कोनो क्रमबद्ध काव्य, कि महाकाव्य नहि छन्हि। विशेष मुक्तक—फुटकर सएह। हुनक मृत्युक पचहत्तरि वर्षक बादक लिखल

पाण्डुलिपिमे २५० मात्र रुबाइ भेटैछ। आॅक्सफोर्डक 'बोडलियन' लाइब्रेरीमे उपलब्ध फारसीक पाण्डुलिपिमे १५८ मात्र रुबाइ छलन्हि जे प्रोफेसर कॉबेल, फिट्जेरॉल्ड महोदयकेँ पठओने छलथीन्ह। पाछाँ किछु वर्ष पश्चात्—एसियाटिक सोसायटिक पाण्डुलिपिमे ५१६ रुबाइ भेटल आ' क्रमहि, यूरोपीय विद्वान् ओ अनुसन्धानवेत्ताक प्रयासेँ करीब १२०० रुबाइ आब हिनक लिखल कहल जाइछ। अवश्य, बहुतो गोटाक धारणा—जे एहिमे महाकवि ओमरक लिखल आठसएसँ वेशी नहि छन्हि; बाँकी ४०० हुनके नाम पर प्रक्षिप्त थीक। ई असम्भव नहि; कतेको अनको रचल गीतमे "भनहि विद्यापति"-कि "सूरदास प्रभु तुम्हरे दरसको"—हमरो लोकनिकेँ श्रुतिगोचर होइतहि अछि।

यूरोपमे 'रेनासाँ'क क्रममे साहित्यक क्षेत्रमे तीव्र जिज्ञासा जागृत भेल। अपन पाश्चात्य वस्तु, विचार एवं साहित्यमात्रसँ सन्तुष्ट नहि भए, ओ लोकनि प्राच्य वस्तु सभदिशि झुकलाह,अन्वेषण करए लगलाह। जतए नीक ग्रन्थ भेटन्हि अनुवाद करथि, ओकर प्रचार करथि, स्वयं अपन ओ अपन साहित्यक गौरव वृद्धि करथि। उनैसम शताब्दीक मध्यमे जखन फिट्जेरॉल्ड महोदयकेँ 'ओमर खैयाम'क रुबाइयातक पाण्डुलिपि भेटलन्हि, ओ मुग्ध भए गेलाह। स्वयं एक सरस कवि छलाह। ओहि १५८ रुबाइक सार लए, केवल ७५ चतुष्पदी मात्रमे अनुवाद कएल जे सर्वप्रथम १८५९ ई० मे प्रकाशित कराओल। पहिने एहि दिशि लोक ततेक ध्यान नहि देलक। प्रथम संस्करणक २५० प्रति मात्रो ओहिना पड़ल रहल—फेकले सन गेल। किन्तु किछुए दिनक बाद जखन विद्वान्मण्डलीक ध्यान एहि दिशि आकृष्ट भेल त पाश्चात्य काव्य-जगतमे एक रूपेँ हूलि उठि गेल। फ्रेञ्च, जर्मन, रूसो आदि भाषामे अनुवाद—एकक बाद दोसर, होअए लागल, अनुसन्धान कार्य्य आरम्भ भेल। स्वयं फिट्जेरॉल्ड अपन जीवनकालमे एकर तीनि आओर

संस्करण प्रकाशित करओलन्हि—प्रत्येक बेरि किछु-किछु भिन्न रूप दए, अपना मने यथासाध्य नीक बनएबाक चेष्टा करैत। परन्तु हुनक प्रथम प्रकाशन सएह सर्वोपरि बुझल जाइत छन्हि।

फिट्जेरॉल्ड पद्य सभहिक अविकल अनुवाद नहि कएलन्हि। अनेको कवितामे रुबाइक एक आध पाँतीकेँ लए, अथवा ओकर भावकेँ लए स्वयं एक सुन्दर कविता बनओलन्हि, कतहु दू-दू, तीन-तीन कविताक सार ग्रहण कए एकमात्र चतुष्पदीमे बन्हलन्हि। एतबे नहि, ई पचहत्तरिओ कविताकेँ एहिरूपेँ लिखलन्हि जे बूझि पड़ैछ जेना ई क्रमबद्ध हो—एक प्रकारक विचारधारा प्रस्तुत करैत हो। ई हिनक विलक्षणता छल।

अनुवादमे कविकेँ मूलसँ विचलित भइए जाए पड़ैत छैक। प्रत्येक प्रत्येक भाषाक अभिव्यञ्जनाना-शक्ति भिन्न होइत छैक, प्रत्येक कविक अपन वैशिष्ट्य होइत छैक, तेँ मूलक निकटतम रहबाक चेष्टो करैत किछु विभिन्नता भइए जाइत छैक। अनेको स्थलमे ओ सौन्दर्य्य-वर्द्धक सिद्ध होइछ। किन्तु फिट्जेरॉल्डक अनुवाद मूलसँ कएठाम बहुत दूर चल गेल जकर किछु उदाहरण देल जाइछ :—

(१) मूल फारसी—

हँगामें सुबूह अस्त व खोरोश ऐ शाक़ी,
माव मय व कय मय फरोश ऐ शाक़ी।
चे जाये सलाह अस्त, खामोश ऐ शाक़ी,
बुगरजे हदीशो, दर, नोश ऐ शाक़ी॥

(पद सं० ३)

अर्थ—

प्रातःकालक समय थीक। हल्ला गुल्ला भए रहल अछि। हम छी, ई मदिरा (शराब) अछि, ओ शाकी (मदिरा बाँटए वाला) अछि।

महाँ की ई (अलाए बलाए) राय विचार दए रहलहुँ अछि, चुप रहू।

फिट्जेरॉल्ड महोदयक अङरेजी अनुवाद—

And as the cock crew, those who stood before
The Tavern, shouted – 'open then the door;
You know how little while we have to stay,
And, once departed, may return no more.'

(२) मूल फारसी—

असरारे अज़ल, राज तु दानी व नमन
वोँ हरफ़े मोअम्मा न तु खाना व नमन
हस्त अज पसे पर्दा गुफ्तगूए मनो तु
चूँ पर्दा बर ओफ्त न तु मानी नमन॥

(पद सं ३२)

अर्थ—

सृष्टिक पूर्वक भेदकेँ ने अहाँ जनै छी ने हम जनै छी। एहि रहस्य—पहेलीक बातकेँ ने अहाँ पढ़ि सकैत छी ने हम पढ़ि सकैत छी। पर्दाक पछासँ हमरा आ' अहाँक बीच किछु बात भए रहल अछि; पर्दा हँटि जाए त ने हम रहब ने अहाँ रहब।

अङरेजी अनुवाद

There was a Door to which I found no key,
There was a Veil past which I could not see,
Some little talk a while of Me and Thee
There seem'd – and then no more of Thee
and **Me.**

(३) मूल फारसी—

नेकी व बदी के दर ने हादे बशर अस्त,
शादी व ग़मे के दर, क़ज़ाओ कदर अस्त।
बा चर्ख मकुन हवाला कदर रहे अक्ल,
चर्ख अज़ तु हजार बार बेचारा तरस्त॥

(पद सं० ५२)

अर्थ—

नीक वा अधलाह मनुष्यक स्वभावमे छैक, सुख आे दुःख (जीवनक) आवश्यक अङ्ग छैक। आकाशक भरोसें कोनो काज नहि करू, किए त बुद्धिक विषयमे ओ (आकाश) अहूँसँ शक्तिहीन अछि।

अङ्गरेजी अनुवाद—

And that inverted Bowl we call the sky,
Where under crawling copt we live and die;
Lift not thy hands to it for help—for it
Rolls impotently on as thou or I.

उपर्युक्त किछु उद्धरणसँ बूझल भए जाएत जे फिट्जेरॉल्ड केहन स्वतन्त्र रूपें अनुवाद कएने छथि। भए सकैछ हिनका मूल फारसीक सभ शब्द आे भावक पूर्ण अर्थ नहि लागल होइन्हि, भए सकैछ, सभ वस्तुकें बुझिओ कए ई अपन अनुवाद एहने स्वतन्त्र रूपें कएलन्हि। सुन्दर आे आकर्षक हिनक अनुवाद एहने भेल जे मूल फारसी कविताक शब्देटाकें नहि, भावोकें लोक बिसरि गेल अछि, आब 'ओमर खैयाम'क रूबाइयातक अर्थ होइछ-'फिट्जेराल्ड'क अनूदित कविता।

यूरोपीय विद्वान् लोकनि जे एहि मध्यपूर्वीय काव्यरत्नकें पाबि नाचि उठलाह, तकर कारण साहित्य-सौन्दर्यक मर्मज्ञता छलन्हि, ताहिमे सन्देह नहि, किन्तु ओहूसँ बेशी हुनका लोकनिकें पूर्वीय देशसँ एहन सामग्री, दार्शनिक बिचार भेटलन्हि जे हुनका सभहिक तत्कालीन विचारधाराक मनोनुकूल छलन्हि, ओही मेलक छलन्हि। ओमर खैयामक कवितामे पुनर्जन्म, मृत्युक बाद कोनो रूपें कर्मक फलभोग आदि विषय पर नितान्त अनिष्ठा अछि; सङ्गहि ई विचार दैछ, जीवन भरि आनन्दपूर्वक रहू, खाउ खेलाउ, मौज करू, एपिक्यूरियन वा चार्वाकी सिद्धान्त,–'यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्' सन। साधारण तरहें इस्लाम मताव-लम्बी मुसलमान लोकनि अपन धार्मिक भावनामे कट्टर होइत छलाह, होइत छथि। हुनका सभहिक शास्त्रमे मदिरा पीब नितान्त गर्हित, धर्मविरुद्ध आचारहीनता, आ' से ओमर खैयाम, मुसलमान भए जखन एहि विषय पर एहन अनिष्ठा देखओलन्हि, एहितरहक धार्मिक आडम्बर पर व्यङ्ग कएलन्हि, कुठाराघात कएलन्हि, तखन तत्कालीन यूरोपीय बुद्धिजीवीकें अपन आचार विचारक पृष्ठपोषक, समर्थक रूपमे आ'र चाहिअन्हि की? ओना पाछाँ आबि एकाधिक विद्वानकें खैयामक कवितामे गूढ़ रहस्य, आत्मा-परमात्माक सम्बन्धमे प्रच्छन्न विवेचन, सूफी मतक छाप आदि बात भेटैत छन्हि, किन्तु साधारणतया ई ग्राह्य करब कठिन।

ओमर प्रकृति-सौन्दर्यक उपासक छलाह, प्रकृतिक गरिमापर मुग्ध होइत छलाह। भए सकैछ, हुनका लोकनिक तत्कालीन समाजमे धर्माडम्बर, अन्धविश्वास चरम सीमा पर चल गेल छल, जकर प्रतिक्रिया हिनका मनमे भेल होइन्हि। दोसर, सम्भव थीक, हिनका जीवनमे कटु अनुभव भेलन्हि, अपन बुद्धि आे ज्ञानक अनुपातमे आशातीत सफलता नहि भेटलन्हि, वा कतेको कार्य्यमे निराशो होअए पड़लन्हि, भाग्यक इशारा पर नाचए पड़लन्हि, तें नियति पर व्यंग आ' मनकें कलुषित नहि कए,

कष्ट नहि दए,—सम्प्रति जे उपलब्ध अछि ताहीसँ जीवनकेँ आनन्दमय बनएबाक चाही— इएह कहबाक चेष्टा कएलन्हि अछि ।

ओमर एकदम निरीश्वरवादी छलाह से कहब कठिन । कतेको हुनक अन्य कवितामे ईश्वर एवं अदृश्य महान् सत्ताक प्रति आस्था भेटत । भए सकैछ, युवा वा प्रौढ़ अवस्था 'यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्' रूपेँ बिताए, पाछाँ अवस्था ढरला पर, ओहि सिद्धान्तक असारता बूझि, अनन्यशरण ईश्वरक प्रति - "डरु नहि सभ बढ़िञे होएत, छथि स्वामी अपन कृपालु"—निष्ठा भेल होइन्हि । एकटा अवश्य, ई जे सोचैत छलाह कि करैत छलाह से निश्छल, निर्भय चित्तेँ । ईश्वरक प्रति वृद्धोवस्थामे जेँ आस्था भेल होएतन्हि तँ दृढ़ रूपेँ । शुद्ध अन्तस्तलेक फल छल जे हिनक समाधि पर प्रकृति पुष्पाञ्जलि अर्पण कएल करए ।

जे किछु, यदि अपन देशवासी मृत्युक उपरान्तो हुनक कवित्व-शक्ति एवं काव्यकेँ गौण बूझि, हुनका केवल गणितज्ञ, ज्योतिषी एवं दार्शनिक रूपेँ आदर कएलथीन्ह, त ओकर विपरीत आधुनिक समस्त संसार हुनक वैज्ञानिक विचक्षणताकेँ विसरि, हुनका कवि-सम्राट् रूपेँ पूजा करैछ । हुनक 'रुबाइयात'क रसास्वादनसँ चिरअतृप्त रहैत विश्वक सुधी समाज कृतकृत्य होइछ । इएह त महान् कविक विलक्षणता थीक ।

—इत्यलम् ।





उठु प्रियतमे...
.... मीनार महान !

॥ श्रीः ॥

॥ रुबाइयात-ए-ओमर खैयाम ॥

(१)

उठु प्रियतमे ! नैश-तम-भाजनमे अरुणिम पाषाण
फेकल उषा, पड़ाएल उड़ुगण, क्षिप्रचरण मुखम्लान।
देखु प्राच्य-आकाश-शिकारी किरणक जाल पसारि,
कोना फँसाओल सुन्दर सुलतानक मीनार महान!

(२)

जखन अलस ऊषाक वामकर श्लथ पसरल आकाश,
सपना सुनलहुँ—मधुशालासँ केओजन करुण निराश-
-स्वरसँ कहइछ—तरुण! जागु अरु भरि भरि पीबिअ पात्र,
तनु-चषकक जीवन-मधु-शेषक पहिनहि भोग बिलास !

(३)

अरुण शिखा धुनि सुनितहि ऊठल, पान्थ सकल भए ठाढ़,
मधुशालाकेँ घेड़ि कहए लागल—झट खोल केबाड़;
जनइत छेँ, कत थोड़ समयले छी हमसभ एहिठाम !
भए सकैछ, पुनि घुरि नहि आएब, जखन धरब पथधार।

(४)

नूतन वर्ष समागत, उपगत आकांक्षा उल्लास,
विज्ञ मनोषी चलल शान्तचित शुभ एकान्त निवास।
जतए पवित्र-ज्योति-युत-मूसा कर-पल्लवित प्रशाख,
अरु निर्गत ईशाक अवनितलसँ सकरुण उच्छ्वास ॥

पद सं० ४—हजरत मूसाक हाथसँ ज्योति बहार होइत छलन्हि आ' ईशाक श्वासमे मृतकोकेँ जीवित करबाक शक्ति छलन्हि।

(५)

गेल सकल पाटल प्रसूनसङ ओ एरमक उद्यान !
ककरा ज्ञात — कतए जमशेदक सप्तचक्रद्युतिमान-
-मन्त्रपात्र ! अछि किन्तु लतासँ प्राप्त रत्न अङ्गूर,
एखनो सुमन वाटिका लहलह सलिल सङ्ग छविमान ॥

(६)

युग युगसँ अछि बन्द ओठ, दाऊदक सुमधुर गान,
किन्तु अमर बुलबुल-कलकण्ठक निस्सृत पञ्चम तान
कहइछ—सुरा, सुरा, मधु, रक्तिम मदिरा पीबि गुलाब,
होएत पीत कपोल अहँक कोमल, अरुणिम, अम्लान ॥

पद सं० ५—एरमक उद्यान—शद्दादनामक राजाक लगाओल अरबक मरुस्थलमे गुलाबक फुलवाड़ी—जे लुप्त भए गेलैक।

जमशेदक···मन्त्रपात्र। राजा जमशेदकेँ एक सात चक्रवाला पात्र (प्याली) छलन्हि जाहिसँ सातो लोक, सातो समुद्र, नक्षत्र आदिक विषयमे ज्ञान भए जाइत छलैक।

पद सं० ६—दाऊद-एक पैगम्बर जे गान विद्यामे अत्यन्त निपुण छलाह।

(७)

आउ, भरू मधुपात्र प्रिये, ऋतुराज अनल प्रज्वाल,
फेकि शिशिर परिताप पापमय मलिन वसन जञ्जाल।
समयक पक्षीकेँ उड़बा लेʼ पथ नहि बेशी दूर—
अरे! जा-आ-आ-आ-ह! ओ पाँखि पसारल उड़बा ले तत्काल!

(८)

शतशत कुसुम प्रस्फुटित, विकसित, होइछ जखन प्रभात,
अरु असंख्य सुमनक दल झरइछ अवनिक तल अज्ञात।
पाटल-नवल-प्रसूनक डाला आनए जे मधुमास,—
लए जाएत ओ कैकुबाद, जमशेद प्रभृति विख्यात॥

पद सं० ८—कैकुबाद—सेलजुक वंशक एक प्रसिद्ध सुलतान।

(९)

कैखुसरू वरभूपक स्मृति वा कैकुबाद सुल्तान,
बिसरि जाउ, रुस्तम आदिक, जत परमवीर बलवान।
हातिमताइक भोज तथा सौजन्यक जनु करु लोभ,
प्रिये! आउ खैयाम सङ्ग निश्चिन्त करिअ मधुपान॥

(१०)

चलु एकाकिनि सङ्ग हमर सखि, जतए सुकोमल घास
शस्य भूमि अरु मरुस्थलक बिच लताकुंज विन्यास।
जतए न केओ राजा न रंक, नहिं प्रभु न किंकरक नाम
बादशाह महमूद तुच्छ, जतʼ ई सौभाग्य विलास।

पद सं० ९—कैखुशरू—फारसक एक प्रसिद्ध राजा।
रुस्तम—फारसक एक प्रख्यात बीर।
हातिमताइ—अरबक सरदार जिनकर अतिथि-सत्कार प्रसिद्ध अछि।

(११)

गतए पड़ल तरु-घन छायातर शाद्वल पर एकान्त,
भरल पात्र मधु, भोज्य वस्तु किछु, सरस काव्य, चितशान्त,
अरु लगमे बैसलि प्रेयसि ! अहँ गबइत मृदु सङ्गीत,—
निर्जन वन हमरा सभहिक हित नन्दन बनत नितान्त ।।

(१२)

सोचथि बहु, सुन्दर सुख भोगब पार्थिव सौख्य पदार्थ,
अन्य स्वर्ग सुख दुर्लभ बूझथि, करथि त्याग, परमार्थ ।
त्यागि अदृश्य भविष्य मोह, अहँ भोग करिअ जे प्राप्त,
'दूरक ढोल सोहाओन' उक्तिक होइछ एतए चरितार्थ ।।

(१३)

देखु चतुर्दिश विकसित पाटल पुष्प कहैछ सहास—
अनिल संग हम झूमि रहल छी, जगबिच अछि उल्लास ।
खोलि अपन कौशेय-कोषिका संचित निधि सानन्द,
लुटा दैत छी उद्यानक बिच, निज मधु गन्ध विलास ।।

(१४)

सांसारिक आशा, आकांक्षा, नर-जीवन आधार,
होइछ विफल—सभ क्षार !-आ'र यदि कथमपि ओ साकार
फलित होअ, तँ, अल्पकालले ओकर तुष्टि, आनन्द,
जिमि चमकए धूसर मरु ऊपर क्षण भरि शुभ्र तुषार ।।

(१५)

कएल कृपणता जीवन भरि, राखल जे केश्रो स्वर्णक भंडार,
अथवा जे केश्रो खूब बहाश्रोल धन सम्पति जनु पानिक धार।
दुनू व्यक्ति मृत्युक पर पृथ्वी-रज साधारण होश्र' विलीन,
नहि केश्रो बनत स्वर्णरज सन, जे कोड़ि करत मानव व्यवहार॥

(१६)

सोचिश्र हम, मानव यात्री हित ई संसार सराय पुरान,
जकर विशाल द्वार निशि वासर, क्रमशः चन्द्र, सूर्य्य द्युतिमान।
कत सुल्तान, शाह वर भूपति ऐश्वर्य्यक सुख भोग विलास
कएल मात्र दुइ चारि दिवस धरि, पुनि सभ निज पथ कएल प्रयाण॥

(१७)

जमशेदक मदिरारुण लोचन दर्प भरल छल जे दरबार,
श्राइ सरीसृप, वन्य हिंस्र पशु करए ततए श्रावास विहार।
अतुल-लक्ष्य-भेदी बहराम शिकारी जनिक जगतमे ख्याति–
पड़ल कब्रमे, माथक ऊपर बनगदहा खुर करए प्रहार॥

(१८)

सोचिश्र कखनहुँ—तेहन लाल नहि हो सभ थलक गुलाबक फूल,
जेहन, जतए सीजर सन वीरक शोणित सिंचित अछि तरुमूल।
श्ररु प्रत्येक लता सङ सुमनक वृन्त देखिकए होइछ भान,
जनु सुन्दरिक कुसुम गुम्फित कुन्तल पसरल उद्यान दुकूल॥

पद सं० १७—बहराम—फारसक बादशाह, अत्यन्त कुशल शिकारी जे ससरफानी फेकि घोड़गदहाकें अद्‌भुत कौशलसँ फँसा लेथि।

पद सं० १८—सीजर—रोमन साम्राज्यक महाप्रतापी सम्राट्—जे अपन मित्रवर्गहि द्वारा मारल गेलाह।

(१९)

केहन सुकोमल मृदु कमनीय हरित नवदल घनश्याम,
सरिता-तट-अधरक आच्छादन कए रमणीय ललाम ।
चलइत छी हम सभ एहिपर, चलु धीर पदेँ सुकुमारि,
के जनैछ, ई ककर अधर-रससँ उपगत अभिराम !

(२०)

आह ! प्रिये भरि भरि प्याली मदिरा पिआउ अहँ आज,
भूतक सभ अनुताप, भविष्यक आशंकाक न काज ।
काल्हि ! अँहह-काल्हिक न बात करु, के जनैछ हम काल्हि,
बिसल असंख्य काल्हि कालक वश, मिलब न विगत समाज ॥

(२१)

जिनका प्रति हम सभ कएलहुँ मृदुस्नेह, प्रेम, श्रद्धा, उद्‌गार,
क्रूर काल अरु नियति चक्र पड़ि भोगि न सकला जीवन-सार ।
मात्र चारि मधु-चषक पीबि मधुशाला तजि ओ सभ चललाह;
रहल अतृप्त तृषा-अभिलाषा, सुप्त अन्त विश्रामागार ॥

(२२)

जे थल ओ सभ छोड़ल, हम सभ करिअ ओतए आनन्द विलास,
आइ प्रकृति बासन्ती मधुमय हृदयक बिच आनए उल्लास ।
हमहूँ सभ चल जाएब अवनितल—शय्या पर सूतब एकान्त,
मान करत उत्सब किछुदिन, पुनि हमरहि पर चिर शयन निवास ।

(२३)

अरे ! प्राप्त जे किछु एखनो, कए लिअ' ओकर उपभोग,
मरिकए माटि मिलक पहिनहि, करु सुभग तनक उपभोग।
माटिक बनल, मिलत पुनि माटिहि, माटिक तर विश्राम–
बिनु गायक, संगीत सुरा बिनु, चिर एकान्तक भोग।

(२४)

वर्त्तमान सुख भोग हेतु जे छथि उद्यत करइत व्यापार,
आओर भविष्यक आशा-पथ दिशि हेरि सहथि जे कष्ट अपार।
तिमिरक भवन शिखर पर चढ़िकए देअए मुअज्जिन नित्य अजान
अरे मूर्ख ! नहि एतए न वा परलोकहिं मे पएबें उपहार॥

पद सं० २४—मोअज्जिन—अजान देब' वाला—मौलवी।

(२५)

लोक तथा परलोक विषयमे करइत कत शास्त्रार्थ विचार,
विज्ञ, सन्त-ऋषि-मुनिगण, मूर्ख प्रगल्भ सङ्ग भए एकाकार–
चलथि मृत्युपथ ! रहि जाइत अछि हास्य अवज्ञास्पद सिद्धान्त,
अरु हुनकर मुख बन्द करए भरि माटि, देखु जगतक व्यवहार॥

(२६)

आउ प्रिये खैयाम सङ्ग, जनु सुनु की कहइत छथि विद्वान,
एक बात निश्चित एतबे जे, जीवन अछि अति द्रुत गतिमान।
छल प्रवञ्चना झूठ आन सभ, केवल सत्य बुझिअ ई बात,
एक बेरि भए कुसुम प्रफुल्लित होअए शुष्क, म्लान, अवसान॥

(२७)

युवाकालमे हमहुँ जाए पंडित सन्तक लग बेरि अनेक,
पढ़ल शास्त्र, अरु सुनल हुनक कत तर्क ज्ञान, वैराग्य, विवेक;
किन्तु युक्ति शास्त्रार्थ चक्रमे पड़ि घुरि फिरि हम भेलहुँ बहार,
देखल—मात्र दोआरि जतएसँ गेल छलहुँ, अरु पथ अछि एक ॥

(२८)

हुनके सभक संग हम ज्ञानक बीज वपन कएलहुँ संसार,
ओकर वृद्धि हित कएलहुँ यत्न, तथा सींचल दए श्रम जलधार;
आओर अन्तमे—काटि ओकर फल-शस्य मात्र ई आएल हाथ,
पानि जेकाँ आएल छी जगमे—पवन समान जाएब ओहिपार ॥

(२९)

अएलहुँ किए जगतमे हम, अछि एकर न किछुओ ज्ञान,
आओर कतएसँ अविरल चलइत जलधाराक समान !
पुनि एहिसँ बाहर भए जाएब कतए—कहाँ—नहि जानि,
निरुद्देश्य ई गति, जनु बहइछ मरु प्रान्तर पवमान ॥

(३०)

पूछल नहि हमरा, ढकेलि कए कए आनल एहि गाम,
फेरि एतएसँ बिना बिचारें, फेकत दोसर ठाम !
प्रिये, दारु, मदिरा पिआउ, अतिशय मदहोश बनाउ,
जहिसँ स्मरण रहए किछुओ नहि, ई अशिष्ट विधिवाम ॥

(३१)

पृथ्वीतलसँ ऊपर उठिकए सातो लोक भेलहुँ हम पार,
ओहि सुदूर शनि क्रूर ग्रहक सिंहासन पर कएलहुँ अधिकार।
पथमे विश्वक जटिल समस्या-ग्रन्थि-विमोचन कएल अनेक,
किन्तु रहल अज्ञात मनुष्यक जन्म, मरण, अरु भाग्य विचार ॥

(३२)

एक द्वारि छल रुद्ध, खोलि सकलहुँ नहि जकर केवाड़.
एक गूढ़ आवरण, दृष्टि कए सकल न जकरा पार।
किछु अस्पष्ट सुनल किछु क्षण ले–'हम तोँ' विषयक बात;
पुनि नीरव, सभ बन्द भेल, ओ हो 'हम तोँ'क विचार ॥

(३३)

ग्रह नक्षत्र ज्योतिसँ भासित नभ-मण्डलकेँ कए आह्वान,
आर्त्तस्वरसँ पूछल—'देव ! 'विकल, असहाय मनुज सन्तान–
अन्धकारमे भटकि रहल अछि;–अछि किछु ओकर पृथक आलोक ?'
आएल उत्तर नभवाणीमे–'अन्ध भक्ति, विश्वास–निदान !'

(३४)

तखन एहि माटिक प्याली दिशि झुकलहुँ हम सविषाद,
जीवन-तथ्य-रहस्य बुझिअ यदि पाबि एकर रस स्वाद।
अधर स्पर्श करितहि ई बाजल,—जाधरि जीवन, मीत !
करु मधुपान, मृत्युपर नहि पुनि आएब, बुझु अविवाद ॥

(३५)

सोचिअ हम, ओ प्याली जे मृदु कहल, देल, सुविचार
छल होएत जीवित, करइत क्रीड़ा, आनन्द विहार।
अहा ! आइ जे शुष्क अधर हम चूमल अछि, को जानि
कत मृदु केलि सरस चुम्बनक कएल मधुमय व्यापार !

(३६)

सान्ध्य समय ओहि दिन हम देखल, गेलहुँ जखन ब'जार–
भीजल माटिक गोलाकेँ सानए, पीटए, बहुवार
एहने प्याली बनबए ले; जनु लटपटाएल सन जीह,
गलित शक्ति ओ सिसकि कहै अछि–'हलुके, भाई कुम्हार !'

(३७)

अरे, भरू प्यालीमे मदिरा, व्यर्थ शोच करु बन्द,
समयक बालु पाएर तर बहइछ, जीवन बह स्वच्छन्द।
विगत काल्हि कालक मुख पइसल, आओत जे, नहि जात,
की चिन्ता यदि आजुक मधुमय समय बितए सानन्द !

(३८)

क्षणभरि ले भेटल अवसर एहि प्रलयंकर मरु प्रान्त,
क्षणभरिमे जीवन निर्भर रस पीबि करक चित शान्त।
महाशून्य अरुणोदयमे तारक दल होअ' विलीन,
करू शीघ्रता, देखु यात्रिगण आएलक पथ विभ्रान्त॥

(३९)

ई अनन्त चेष्टा कहिश्रा धरि, पुनि श्रम करब कठोर,
कहिश्रा धरि ई इतस्ततः, धए कलह मिलायक डोर !
उपवनमे अँगूर फड़ल जे, पावि करिअ संतोष,
जे न प्राप्त, अथवा कटु फलले, व्यर्थ करब मन घोर ॥

(४०)

बूझल अछि ई बात बन्धुगण ! कत दिनसँ उत्सवक हिलोर
चलइछ हमर भवनमे प्रतिदिन, नव विवाह, आनन्द विभोर।
वृद्धा, वन्ध्या, तर्कप्रगल्भा नारीकेँ दए देल तलाक,
अंगूरक दुहिता, मधुवाला प्रेयसिकेँ लेलहुँ निज कोर ॥

(४१)

अस्ति नास्ति दर्शनक गूढ़ तत्वक हम करितहुँ बहुविधि अर्थ,
गणित खगोलक सूक्ष्म विवेचन करबामे हम छलहुँ समर्थ ।
किन्तु कएल यदि किछु समुचित चिन्तन, जिज्ञासा सफल विचार
–सुरा समान न किछु गम्भीर बुझाएल, आन विषय सभ व्यर्थ ॥

(४२)

किछुए दिन पहिने मदिरालय-द्वारि खोलि, अएला' अनजान,
देवदूत सन आकृति केओ चुपचाप, जखन दिवसक अवसान ।
हुनक कान्ह पर भरल कलश छल, कहलन्हि हमरा निकट बजाए,
–एकर स्वाद बुझु, हम रस चाखल,–छल द्राक्षारस मदिर महान ॥

(४३)

कत पथ सम्प्रदाय जगमे मतभेद कलह युत करए प्रचार,
सभकें मूक करए निज अद्भुत तर्कंक बल अंगूर उदार।
ई विदग्ध-रस सिद्ध चतुर जे क्षणमे आनए परिवर्त्तन,
अति निकृष्ट जीवनक धातु शीशककें करए स्वर्ण साकार॥

(४४)

त्रास, दुःख, वेदना, ताप आदिक जत शैन्य दुरूह—
आत्माकें आक्रान्त करए रचि अत्याचारक ब्यूह।
ई [illegible] द्राक्षा-महमूद प्रतापी विश्वजयी सम्राट्,
लए निज-सिद्ध तीक्ष्ण-असि करमे, काटए शत्रु समूह॥

(४५)

छोड़ि 'मिश्र' पण्डित सभकें जे करथि अनेक विवाद,
हमरा नहि सम्पर्क जगत केरि कलह द्वेष अविवाद।
चलू कतहु एकान्त जगह, जन कोलाहलसँ दूर,
हँसब हमहुँ हुनकापर, जे उपहास करथि, परिवाद॥

(४६)

बाहर भीतर, ऊपर-नीचा, चारू दिशि-सभठाम—
खेल होइछ, जनु इन्द्रजाल, माया-प्रकाश-घनश्याम।
नभ मण्डल पातिलमे राखल सूर्य्य दीप चक्रान्त,
छाया चित्र विचित्र जीव जग नाचि रहल अविराम॥

(४७)

यदि ई अधर मधुर चुम्बन, अरु अहँक तरल मधुपान,
सभ वस्तुक अन्तिम परिणति सन होअ शून्य, अवसान।
सोचु तखन, कल्पना करू, जावत धरि जीवन, प्राण,
जे अहँ छी, होएब ओएह पुनि शून्य न किछु व्यवधान ॥

(४८)

जा धरि सरिता तटपर विकसित पाटल पुष्प सहास,
आउ, अपन खैयाम सङ्ग, मधुपान करू सोल्लास ।
जखने आमए कालदूत पुनि विषम गरल भरि पात्र,
ओकरो करु स्वीकार, न किंचित, विचलित होउ उदास ॥

(४९)

सतरंजक पाटीसन रात्रि-दिवस-घर-युत पसरल संसार,
जीव-मात्र गोटी लए खेलए, कर्म्म नियति इच्छा अनुसार ;
चल एतए, काटए ओकरा पुनि, मातु करए, पाबए आनन्द,
क्रमशः सभ कालक पेटीमे लए समेटि जाइछ अविकार ॥

(५०)

विनु 'हँ' 'नहि' कहनहि ओंघड़ाएल घुरए गेन सभठाम—
जतए जेना खेड़ा मारए, ओ जाए दहिन वा वाम ।
तहिना एहि भूतल पर अहँके पटकल अछि ओ दैव,
जनइत अछि ओ सभ किछु, केवल ओ जानए परिणाम ॥

(५१)

चपल लेखनी लए कपार पर लिखइत अछि जे लेख,
घुरि नहि देखए—की लिखलक, नहि अहँक सुबुद्धि, विवेक,
ज्ञान करत व्याघात, न ओ काटत पाँती वा शब्द,
अविरल अश्रु बहओनहुँ अहँ धो सकब न अक्षर एक ॥

(५२)

उनटा प्याली सदृश—कहिअ जकरा हम सभ आकाश,
जहितर विवस भार वहि जीविअ, त्यागिअ जीवन-श्वास,
ओहि दिशि जनु जाचना भावसँ देखिअ, हाथ हठाउ,
स्वयं नपुंसक निरालम्ब ओ घूमए सतत निराश ॥

(५३)

पृथिविक प्रथम धूलिकण संङ्गहि अन्तिम मनुजक रजकें सानि,
रोपल बीज आदिअहिमे जे अन्तिम फलक रूप संधानि।
सृष्टिक प्रथम उषा-पट पर ओ अंकित कएलक सभ विधि लेख,
कयामतक संध्यावेला जे पढ़ल जाएत सभ कर्म बखानि ॥

(५४)

कहइत छी ई बात—जखन ओ पुरुष छोड़ि निज लक्ष्यस्थान,
ज्वलित सूर्य्य-हय चढ़ि बढ़इत फेंकल कत ग्रह नक्षत्र महान—
ओतहि जतए हमरा सभहिक बनइत छल आत्मा, जीव, शरीर,
ई निचित्र!—जन्महुँ सँ पहिनहि, बनए भाग्य, अरु कर्म्म विधान॥

पद सं० ५३—कयामत—मुसलमान सभक मनुसार प्रलयक बाद कर्म्मफल-न्यायक दिन।

(५५)

अंगूरक नव तन्तु रहए यदि लपटल हमर शरीर,
नहि सूफीक अवज्ञा हमरा विचलित करत, अधीर ।
बनि सकैछ कुंजी–हमरो जीवन कुधातुसँ भाइ ।
खोलत बन्द केवाड़ जाहि पर पटकथि माथ सुधीर ।।

(५६)

बूझल अछि जे अन्तः सत्यक ज्योति करए शुभ प्रेम प्रकाश,
अथवा क्रोधानलमे भस्मीभूत करए सभ जीवन आस;
मदिरालयमे एक 'झलक' यदि देखी ओकर मनोहर रूप,
की मन्दिर, की मस्जिद! ओकरा बिनु दौड़ब भए व्यर्थ निराश ।।

(५७)

ओह ! जाहि पथपर हम चलितहुँ अपने मनसँ जीवन काल
खोधल कते खाधि ओहिपर अहँ छीटल काँट, पसारल जाल !
की नहि पहिनहि कएल नियन्त्रण जीवन गतिकेँ बन्धन बान्हि,
एखन फँसाएब हमरा ? पतनक कारण गढ़ि पापक जंजाल ।।

(५८)

अरे, अहाँ, जे तुच्छ माटिसँ मनुज-कुलक कएलहुँ निर्माण
आओर अदन उपवनमे राखल सर्प, डँसल जे विष अज्ञान;
निस्सहाय मानवक भालपर जे अछि पाप कलंकक लेप–
भागी सभक अहीँ, मानवसँ क्षमा माङु, करु क्षमा प्रदान ।।

पद सं० ५८—अदन…सर्प…विष अज्ञान ।

बाइबिलक अनुसार, आदि पुरुष आदम, आ आदि स्त्री ईभक संग 'अदन उपवन' मे एक शैतान–दुष्ट सर्प–सेहो छल । ओएह सर्प हिनका सभकेँ फुसिआए अधलाह–ईश्वरक आदेशक विरुद्ध–रास्ता पर अनलक ।

(६३)

केओ नहि उत्तर देल, मौन सभ, किन्तु क्षणक पश्चात्
बाजल एक कुरूप पात्र,—जे पड़ल रहए ओहिकात,—
हमर विकल आकृति-भंगीकेँ देखि हँसए सभ लोक,
हमरा बनबै काल कुलालक काँपि गेल की हाथ ?

(६४)

टोकल अपर, लोक कहइछ, अछि कर्कश एक कलाल,
मुह पर ओकर कालिमा पोतल नरकक धूआँ जाल।
सुनइत छी, अति कठिन परीक्षा होएत सभहिक भाइ !
डर नहि, सब बढ़िञे होएत, छथि स्वामी अपन कृपालु ॥

(६५)

दीर्घश्वास लए, व्यथित हृदयसँ बाजल दोसर पात्र,
चिर विस्मृति, अवहेलासँ भए गेल शुष्क मम गात्र ।
किन्तु होइछ—हमरा एहि जीवनमे पुनि गति संचार
आबि जाएत, यदि परिचित मधुरस पड़ए एक बेरि मात्र ।

(६६)

एहि रूपेँ सभ पात्र ततए करइत छल जखन विचार,
तावत केओ देखल नभमे नव इन्दु वलय-आकार ।
सभ छल उत्सुक, कहल ठकेलि परस्पर सुनु हे बन्धु !
घरमर करए चङेरा, भरिआ अनइछ भोजक भार ॥

(६७)

आह् ! जीवनक अन्तिम क्षणमे द्राक्षा-सुरस लगाएब ठोर,
प्राणमुक्त तनकेँ मदिरासँ स्नान कराएब गन्ध विभोर ;
अरु अंगूरक लता पत्र लेपटाए झाँपिकए हमर शरीर,
गाड़ि देब प्रिय ! कतहुँ मधुर उपवनक अवनितल कोमलकोर ॥

(६८)

वसुधोतरमे पड़ल हमर रज-क्षारक मृदु उच्छ्वास,
पवनसङ्ग उपवनक प्रान्तमे फेकत सौरभ पाश—
जहिसँ केहनो धर्म धुरन्धर मुल्ला ओहि पथलीन,
अनायास फँसि बनत मदिर मधुगन्ध-विलासक दास ॥

(६९)

वास्तवमे आदर्श बूझि जिनका प्रति कएल प्रेम साकार,
ओएह लोक बिच हमर नाम यश नाश कएल, कए छल व्यवहार।
अरजल मान प्रतिष्ठा सभकेँ क्षुद्र एक प्यालीमे बोरि,
हमर ख्याति गौरव लए बेचल केवल गाबि गीत निस्सार ॥

(७०)

सत्य बात, परिताप कएल हम, खएलहुँ शपथ अनेक,
किन्तु, किन्तु की छल – तहिआ हमरा शुभ ज्ञान विवेक !
आओर, तखन आएल कुसुमक माला लए मधुर बसन्त–
क्षणभरिमे सभ ध्वंस भेल, जत छल व्रत नियमक टेक ॥

(७१)

यद्यपि ई मदिरा घातक भए हमरा नास्तिक देलक बनाए,
आओर हमर यश, मान, प्रतिष्ठा-रूप-वसन सभ लेल हंटाए;
हो तथापि आश्चर्य ! देखि मधुबिक्रेता जखन करए विनिमय–
आधो मूल्य न पाबए, अनुपम मधु मदिरा सन बस्तु लुटाए ॥

(७२)

अहो ! विकच पाटल प्रसून सङ जाए सरस ऋतुराज वसन्त,
मधुर यौवनक सुरभित स्नेह भरल गीतक हो सहसा अन्त !
तरु शाखा पर बैसि करै छल जे कोकिल, बुलबुल कल गान,
के जनैछ ओ आबि कहाँसँ पुनि चल गेल कहाँ हा हन्त ॥

(७३)

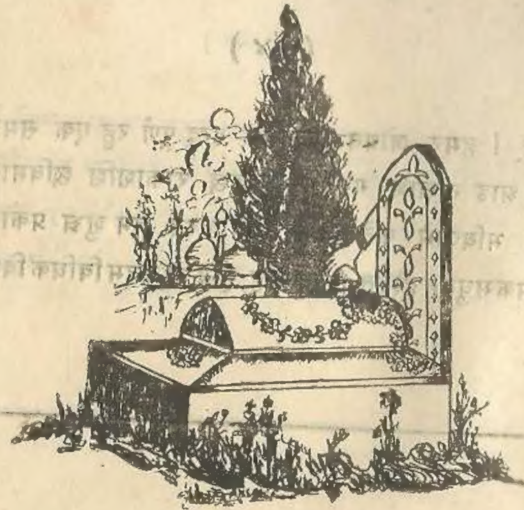
आह ! प्रिये, हम अहँक सङ्ग मिलि विधि-विरुद्ध रचितहुँ षड़यंत्र,
करगत करबाले जगतक दुख-द्वन्द्व वेदना दायक–यन्त्र ।
तोड़ि ताड़ि टुकड़ी टुकड़ी करितहुँ हम ओकरा नष्ट समूल,
आओर बनबितहुँ नूतन सभ किछु, मन इच्छा अनुसार स्वतन्त्र ॥

(७४)

आह ! हमर जीवन-उल्लासक इन्दु पूर्ण रहु एक समान,
देखु आइ नीलाभ गगनमे—उगइछ राकाशशि छविमान ।
पुनि भविष्यमे कतेबेरि ई उगत करत जग शुभ्र प्रकाश–
चकमक मधुवन होएत, किन्तु नहि, हाय रहब हम विधिक विधान !

(७५)

आओर सुकोमल दूभिक ऊपर बैसल तारावलिक समान
अतिथि वृन्द विच द्योतित पद, चलइत सस्मित, करइत मधुपान,
आबी जखन ओतए प्रेयसि, हम जतए पान करितहुँ सानन्द,
खाली प्याली उनटि देब बस, राखि पूर्व-सुख-संगक ध्यान ॥



॥ तमाम शुद ॥